Sanskritik aur Samajik Anusandhan
www.shodhjournal.com
ISSN: 2582-5852
Received: 06-02-2020; Accepted: 08-03-2020; Published: 17-03-2020
Volume 1; Issue 1; 2020; Page No. 17-21

जोगिन्द्र सिंह कंवल के उपन्यास 'धरती मेरी माता' में प्रवासी भारतीयों की समस्याएं

Subashni Shareen Lata
Research Scholar, DOS in Hindi, Manasagangotri, University of Mysore, Mysore, Karnataka, India

सारांश
जोगिन्द्र सिंह कंवल एक ऐसे उपन्यासकार है जिन्होंने फीजी की समकालीन भारतीय समाज की विभिन्न परिस्थितियों, प्रवृत्तियों व समस्याओं का विस्तृत, गहरा एवं यथार्थ अनुभव किया है। 'धरती मेरी माता' कंवल जी का एक सामाजिक समस्या प्रधान उपन्यास है। इस उपन्यास में औपनिवेशिक काल में भारत से फीजी द्वीप आकर बसने वाले प्रवासी भारतीयों की जमीन की समस्या उठाई गई है। गिरमिट प्रथा समाप्त हो जाने पर कई भारतीय श्रमिकों ने फीजी देश को अपने खून-पसीने से सींचा और इस धरती को अपना घर समझकर यहीं बस गए। उक्त उपन्यास में श्यामसिंह का परिवार फीजी के भूमिहीन किसानों का प्रतिनिधित्व करता है। दुखों, कष्टों, परेशानियों के बावजूद भारतीय किसान धरती से संबंधित अपने धर्म को निभाते हैं। लेकिन, जब कानूनी रूप से जमीन की लीस का नवीकरण नहीं हो पाता है तब किसान टूट जाते हैं और उन्हें अपने जमीनों से विस्थापित होना पड़ता हैं। प्रस्तुत उपन्यास में कंवल जी ने जमीन से जुड़ी इन्हीं समस्याओं को उठाया हैं।

मूल शब्द: प्रवासी, विस्थापन, लीस, फीजी, औपनिवेशिक काल

प्रस्तावना
साहित्य और समाज का संबंध अनादिकाल से चला आ रहा है। साहित्यकार जिस समाज में रहता है, उसी समाज का प्रतिनिधित्व करता है। उसी वातावरण में उसका शारीरिक और मानसिक विकास भी होता है, वह अपनी समस्याओं का सुझाव, अपने आदर्शों की स्थापना अपने समाज के अनुरूप ही करता है। सामाजिक कथाकार के रूप में फीजी के साहित्यकार जोगिन्द्र सिंह कंवल जी का स्थान महत्वपर्ण रहा है।

'धरती मेरी माता' जोगिन्द्र सिंह कंवल का एक सामाजिक समस्या प्रधान उपन्यास है। इस उपन्यास में औपनिवेशिक काल में भारत से फीजी द्वीप में आकर बसने वाले प्रवासी भारतीयों की जमीन की समस्या उठाई गई है। गिरमिट प्रथा समाप्त हो जाने पर कई भारतीय श्रमिकों ने फीजी देश को अपने खून-पसीने से सींचा, और इस धरती को अपना घर समझकर यहीं बस गए। दुखों, कष्टों, परेशानियों के बावजूद भारतीय किसान धरती से संबंधित अपने धर्म को निभाते रहे हैं। खेतों को बनाते, सवारते धीरे-धीरे उन्हें जमीन से प्यार हो जाता है, जो स्वाभाविक है। सन् 1999से 'धरती मेरी माता' उपन्यास फीजी के सकेंड्री स्कूलों में हिंदी साहित्य पाठ्यक्रम का हिस्सा है। यह देखा जा सकता हैं कि कंवल जी का साहित्य प्रवासी जीवन की समस्याओं से घिरा हुआ।

यह एक प्राकृतिक नियम है कि व्यक्ति जिस वातावरण में रहता है वहाँ की मिट्टी, जलवायु, पेड़-पौधे और लोगों से लगाव हो जाता है। इन संवेदनाओं को उपन्यास का नायक नन्दू इन शब्दों में अभिव्यक्त करता है- "इस धरती की गोद में हम बड़े हुए। इसकी मिट्टी में हम खेले। हमारी रग-रग में इसका पानी खून

बनकर दौड़ रहा है। हमारे रोम-रोम में इसका प्यार समाया हुआ है।"[1] मगर जब परिस्थितियाँ मजबूर करती है तो उन्हें इन सब से जुदा होना पड़ता है। जब किसान को अपने खेतों से जुदा होना पड़ता है तब उसकी मानसिक पीड़ा असहाय होती है। ' धरती मेरी माता' श्यामसिंह नामक एक ऐसे किसान परिवार की गाथा है जिसे अपने जमीन से मोह है, और जब उन्हें इस जमीन को छोड़ना पड़ता हैं तब वे पूरी तरह टूट जाते हैं। इस टूटन और असुरक्षा के कारण फीजी के कई गिरमिटियाँ भारतवंशी परिवारों ने ऑस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड, संयुक्त राज्य अमेरिका और कैनेडा जैसे देशों में दोहरी प्रवास की योजनाएं बनाई। एक बार फिर इन प्रवासी भारतीयों को भौगोलिक तथा सांस्कृतिक विस्थापन के दौर से गुजरना पड़ा। 'धरती मेरी माता' फीजी के प्रवासी भारतीयों के वास्तविक जीवन की संवेदनाओं से जुड़ी है जिसमें जमीन एक महत्वपूर्ण मुद्दा है।

केंद्रिय समस्या

'धरती मेरी माता' उपन्यास किसान श्यामसिंह और उसके परिवार के जीवन पर आधारित है। लेखक ने उक्त उपन्यास के माध्यम से कुछ समस्याओं का अंकन किया है, जिसका अध्ययन निम्नलिखित है।

- **कृषि पट्टे की जमीन की समस्या**

फीजी में भूमि का स्वामित्व एक संवेदनशील मुद्दा रहा है। वर्तमान में, स्वदेशी फीजियन के पास 87% भूमि है, हालांकि इसे 99 साल की अधिकतम अवधि के लिए पट्टे पर दिया जा सकता है। सभी देशी भूमि पट्टों का प्रबंधन नेटिव लैंड ट्रस्ट बोर्ड (Native Land Trust Board-NLTB) द्वारा किया जाता है।[2] ध्यान देने वाली बात यह भी है कि नेटिव लैंड ट्रस्ट बोर्ड के सभी सदस्य स्वदेशी फीजियन हैं। अतः यहाँ स्वदेशी फीजियन जमींदार और हिन्दोस्तानी किरायेदारों हैं।

फीजी में सन् 1987 से जमीन से जुड़ी कई समस्याएं सामने आईं हैं, जैसे- कृषि पट्टों की समाप्ति, कई स्वदेशी भूमि स्वामियों ने मुख्यतः हिन्दोस्तानी किरायेदारों को उनके भूमि और घर से निकाल दिया तथा पट्टा भुगतान करने और कठिन श्रम प्रदान करने के बावजूद किसानों को पट्टों के नवीकरण के अधिकार के लिए मना कर दिया गया। फीजी में इन कृषि पट्टों का एक बड़ा हिस्सा चीनी उद्योग के लिए उपयोग में लाया जाता है। हाल के वर्षों में जमीन के पट्टों का नवीकरण न होने के कारण गन्ना उत्पादन में भी गिरावट हुई थी। तथा बढ़ती संख्या में किसानों का भी नुकसान हुआ, जिसका उदाहरण 'धरती मेरी माता' का नायक नन्द कुमार का परिवार है। भूमि पट्टों की समाप्ति ने इन किसानों को जीवनयापन के लिए अन्य तरीके खोजने पर मजबूर किया।

प्रस्तुत उपन्यास में कंवल जी जमीन से जुड़ी इन्हीं समस्याओं को उठाते हैं। उपन्यास में श्यामसिंह का परिवार भूमिहीन किसानों का प्रतिनिधित्व करता है। आदिवासी फीजियन सामन्तों से पट्टे पर ली गई जमीन पर हिन्दोस्तानी किसानों का कोई अधिकार नहीं था। पट्टे की अवधी समाप्त होने पर किसानों को अपने लहलहाते खेत, घर, जमीन, पड़ोसी सब कुछ छोड़कर जाना पड़ा। जब श्यामसिंह की जमीन के पट्टों का नवीकरण नहीं हो पाया तब वह हताश होकर कहता है- "यह कानून भी कितना अन्धा है। जो जमीन में हल चलाता है और इस मिट्टी से सोना निकालता है उसका पक्ष नहीं करता। इतने साल हम इस मिट्टी से मिट्टी होते रहे मगर ये खेत फिर भी पराए ही कहलाते हैं।"[3] परिश्रमी भारतीय किसान अपने खून-पसीने से इस भमि को उपजाऊ बनाते हैं और जब उनकी जमीन उनसे छीन ली जाती है तो वे मानसिक और शारीरिक रूप से टूट जाते हैं। श्यामसिंह अपना दर्द इन शब्दों में प्रकट करता है- "हमने इस जमीन को साफ किया, आबाद करने के लिए क्या कुछ नहीं किया। कांटेदार झाड़ियाँ कांटी। पत्थर उठाए। चार एकड़ चिकनी मिट्टी में कुदालियाँ चलाई। कड़ी मिट्टी के ढलों को कूट-कूट कर बारीक किया ताकि फसल अच्छी हो (पृष्ठ 44)।" साम्बेतो गाँव के आदिवासी फीजियन जमीन मालिक (मातंगाली) पट्टे समाप्त हो जाने पर अन्य किसानों से भी उनकी जमीनें ज़ब्त कर लेते हैं।

उपन्यासकार ने किसानों के दर्द के अलावा धरती माता की पीड़ा को भी वाणी दी है। भारतीय संस्कृति में पोषण करनेवालें को 'माँ' तुल्य जीवनदायिनी माना जाता है। इस लिए हम धरती को माँ कहते हैं जिसका उदाहरण उपन्यास का शीर्षक ' धरती मेरी माता' है। जब किसान अपने लहलहाते खेत छोड़कर जाने लगते हैं तो धरती भी रो पड़ती है। "तुम मुझे छोड़ कर जा रहे हो। यह न समझो कि मैं बेजान हूँ। मेरे अन्दर भी एक अनोखा जीवन धड़कता है। तुम चले जाओगे तो यहाँ झाड़ियाँ पैदा हो जाएगी। उनके कांटे मेरी छाती में चुभने लगेंगे। वे मेरे रूप को झरीटकर मुझे बदसूरत बना देंगे। जब यहाँ कोई हल नहीं चलाएगा, हल के पीछे कोई गीत नहीं गाया जाएगा, मेरे गर्भ से कोई फसल नहीं पैदा होगी, तो मेरा यह रूप नष्ट हो जाएगा।" यहाँ लेखक ने धरती को मानवीय संवेदना दी है। ऐसी

बहुत सारी जमीन हैं जिन पर जमींदारों ने कब्ज़ा करने के बाद खेती तक नहीं की। इसलिए अब वहाँ फसलों की बजाए झाड़ियाँ खड़ी हो गई हैं।

भारतीय मूल के फीजियन्स के पास भूमि का अधिकार न होना एक प्रकार से उनके भविष्य के लिए असुरक्षा का संकेत है। उनके दिलों-दिमाग में बार-बार यह प्रश्न बेचैन करता है कि क्या उनके पट्टों का नवीकरण होगा? यदि नहीं, तो उनका क्या होगा? वे अपने और अपने परिवार की जरूरते कैसे पूरा करेंगे? वे कहाँ स्थानांतरित होंगे? नायक नन्दू भी इन्हीं प्रश्न से परेशान है। पाठकों के समक्ष उपन्यासकार इस गम्भीर समस्या को नन्दू के स्वप्न के माध्यम से दर्शाते हैं- "तीस साल के बाद क्या होगा?...मैं तो चिल्ला-चिल्लाकर कर पूछूँगी कि मेरे बच्चों का क्या होगा?... वे क्या करेंगे?" नन्दू को तीस साल के लिए पट्टे पर जमीन मिल जाती है मगर उसे अपने वंशज के भविष्य की चिंता सताती है।

'धरती मेरी माता' में कंवल जी ने प्रवासी भारतीयों की जमीन की समस्या को संवेदनशीलता के साथ प्रस्तुत किया है। फीजी में यह एक गम्भीर सामाजिक एवं राजनैतिक मुद्दा है।

- **विस्थापन का दर्द**

विस्थापन की वजह से जो लोग पीढ़ियों से एक जगह पर रह रहें थे उन्हें वह स्थान छोड़ना पड़ता है जिसकी वजह से सामाजिक संरचना एवं संगठन विघटित हो जाते हैं। 'धरती मेरी माता' में कंवल जी ने जमीन की समस्या के अलावा किसानों के जीवन में विस्थापन से उत्पन्न समस्याओं को केंद्र में रखा है। विस्थापन के कारण किसान अपनी जीविका से वंचित हो जाते हैं, वे हाशिए पर धकेले दिए जाते हैं और उनकी विपन्नता दिन-ब-दिन बढ़ती जाती है। इस समस्या का उत्कृष्ट उदाहरण किसान श्यामसिंह का परिवार है जिन्हें जमीन के पट्टे का नवीकरण न होने के कारण साम्बेतो गाँव छोड़कर नवाईदोम्बा जैसे उजड़ इलाके में बसना पड़ता है।

विस्थापन का अर्थ है अपना घर और स्थान छोड़ना, दो-चार दिन के लिए नहीं बल्कि सदा के लिए छोड़कर दूसरी जगह बसना। यह स्थिति बहुत पीड़ादायक होती है। अपने घर, जमीन, गाँव से सभी को लगाव होता है, और इतने साल एक जगह रहने के बाद दूसरी जगह विस्थापित होना मुश्किल होता है। देश व विदेश में जब-जब कोई प्राकृतिक विपदा, आर्थिक व सामाजिक स्थिति आती है तब-तब विस्थापन की समस्या लोगों के सामने खड़ी हो जाती है। भूकंप, तूफान, बाढ़ आदि की परिस्थितियों में लोगों को अपने घर से विस्थापित होना पड़ता है पर यह विस्थापन अस्थायी है। इन स्थितियों में व्यक्ति को आर्थिक, शारीरिक व मानसिक परेशानियों से गुजरना पड़ता है। आजा श्यामसिंह के विस्थापन के दर्द का चित्रण उपन्यास में इस प्रकार वर्णित हैं- "साम्बेतो छोड़ने की चोट ने उसके अंग-अंग को तोड़ दिया है। उसका टूटा शरीर नवाईदोम्बा में तो रहता है मगर वृत्ति साम्बेतो की धरती से जुड़ी रहती है।"[4]

विस्थापन के कारण विस्थापितों की खाद्य असुरक्षा बढ़ जाती है, पहले वह कृषि से खाद्य समाग्री प्राप्त कर लेते थे परन्तु विस्थापन के बाद नई जगह में उन्हें खाद्य समाग्री बाजार से खरीदनी पड़ती है। 'धरती मेरी माता' में इस समस्या का वर्णन इस प्रकार किया गया है- "नवाईदोम्बा जैसे गैर-आबाद इलाके ने श्यामसिंह के परिवार के लिए कई समस्याएँ पैदा की। यहाँ की जमीन सख्त बंजर थी, कंटीली झाड़ियाँ और कहीं काले पत्थर, कहीं चिकनी मिट्टी और कहीं चट्टाने, ये सब न सिर्फ इंसानी हाथों बल्कि बैलों की एक मजबूत जोड़ी की भी सारी शक्ति चूस लेते थे।"[5] इसके बावजूद बाप-बेटा, मनीलाल और नन्दू अपने परिवार की जीविका के लिए इसमें जूझते रहें।

विस्थापन से विस्थापितों के मानव अधिकारों का उलांघन भी एक मुद्दा है। किसी को उसके निवास स्थान से विस्थापित करना और उसकी संपत्ति का उचित मुआवज़ा ना प्रदान करना, उसके मानव अधिकारों का उलांघन है। डॉ.अंकुर पारे की पुस्तक ' विस्थापित परिवारों का समाजशास्त्रीय अध्ययन' में उन्होंने विस्थापन के प्रभावों पर प्रकाश डालते हुए लिखा है कि विस्थापन से विस्थापितों के सामाजिक एवं आर्थिक अधिकारों का भी उलंघन होता है। विस्थापन के कारण लोगों में सामाजिक और मानसिक तनाव उत्पन्न होता है जिससे उनका स्वास्थ्य प्रभावित होता है। विस्थापन से लोगों के सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक जीवन में परिवर्तन आता है। विस्थापन का प्रभाव अमरू के परिवार को तोड़ देता है और आजा श्यामसिंह की जान तक ले लेती हैं। नायक नन्दू अपने घर के उखड़ने का दुख सभा में आए लोगों के साथ बांटता है- "जब लकड़ी के घरों को उखाड़कर दूसरे स्थान पर ले जाने की कोशिश की जाती है तो आधी लकड़ियाँ तो टूट-फूट जाती है। ...लेकिन सीमेंट का बना पक्का मकान कैसे उखड़ेगा। नई जमीन में नया घर कैसे खड़ा किया जाए।"[6] इस कठिन परिस्थिति में बैंक भी किसानों को कर्जा देने में संकोच करते हैं और रिश्तेदार

भी मदद नहीं करते। इतने सालों से अपनी बसी-बसाई जमीन से उखड़ने के बाद बेचारा किसान न घर का रहता है न घाट का। वह त्रिशंकू की भांति बीच में ही लटकता है। विस्थापन की स्थिति व्यक्ति को मानसिक रूप से तोड़ देती है। व्यक्ति जहाँ कहीं भी रहने के लिए जाता है उसे वहाँ की परिस्थितियों में खुद को ढालना पड़ता है और नए तरीके से स्थापित होना पड़ता है। जब किसी पेड़-पौधे को उखाड़कर दूसरी जगह लगाया जाए तो वह भी कई दिनों तक मुरझाया ही रहता है।

प्रस्तुत उपन्यास में विस्थापन से प्रभावित किसान कृषि पर निर्भर हैं। किसानों की कृषि भूमि छिन जाने से इनकी आजीविका का साधन ख़त्म हो जाता है और इन्हें नई जगह जीवनयापन करने में कई मुश्किलों का सामना करना पड़ता है। 'धरती मेरी माता' में कंवल जी ने विस्थापन से उत्पन्न दर्द और परिस्थितियों का मार्मिक चित्रण प्रस्तुत किया है।

- **पारिवारिक विघटन**

परिवार स्थायी एवं सार्वभौमिक संस्था है, परन्तु प्रत्येक स्थान पर इसके स्वरूप में भिन्नता पायी जाती है। उदाहरणार्थ पश्चिमी देशों में मूल परिवार या दाम्पत्य परिवार की प्रधानता है तो भारतीय गांव में संयुक्त परिवार या विस्तृत परिवार की। परिवार के अभाव में हम समाज की कल्पना नहीं कर सकते। " सामाजिक संगठन के रूप में परिवार वह मूलभूत संगठन है, जिसे सामाजिक गुणों का पालना कहा जाता है।"[7] आधुनिक युग में तेजी से बदलते हुए सामाजिक मूल्यों और आदर्शों ने परिवार जैसी सामाजिक संस्था को भी प्रभावित किया है। आधुनिक प्रवृत्तियों से प्रभावित परिवार दिन-प्रति-दिन प्रचीन मान्यताओं, मूल्यों आदर्शो व संयुक्त परिवार की एकता को खो रहे हैं। 'धरती मेरी माता' में कंवल ने दैनिक जीवन के मानसिक तनावों का प्रभाव पारिवारिक विघटन के रूप में चित्रित किया है।

एक माँ परिवार के सृजन और पालन की जिम्मेदारी उठाती है। वह वात्सल्य की मूर्ति है। किंतु 'धरती मेरी माता' में सौतेली माँ का बर्ताव पारिवारिक बिखराव का एक अहम कारण है। महादेवी, नन्द कुमार की सौतेली माँ है। 'धरती मेरी माता' का नायक नन्द कुमार अपने आजा, माँ-बाप और भाई-बहन के साथ रहता है। बचपन में नन्दू की माँ कमला गुजर जाती है जिस कारण उसके पिता दूसरी शादी करते हैं। लेकिन सौतेली माँ, महादेवी से नन्दू को स्नेह की बजाय डांट-फटकार और झड़कियाँ ही मिली। नन्दू जब भाषण प्रतियोगिता जीतकर घर ट्रोफी लाता है तब महादेवी न कोई स्नेह न प्रसंन्नता जताती है। नन्दू माँ के प्यार के लिए तरसता है- "मैय्या, आज तो खुशी से कुछ कह देती। आज तो प्यार का कोई शब्द बोल देती।...अगर मेरी असली माँ आज जिंदा होती तो वह मुझे कितना प्यार करती।" महादेवी के रूखेपन ने नन्दू के कोमल हृदय में विद्रोह की चिंगारियां भर दी।

साम्बेतो का घर, जमीन और खेत छिन जाने के बाद महादेवी का व्यवहार सौतेले बेटे, प्रकाश और नन्दू के प्रति और भी कठोर हो जाता है। वह बार-बार नन्दू को कोसती है- "यह नन्दू भी कैसा लड़का है- धोबी का कुत्ता न घर न घाट का। न पढ़ पाया है, न काम करता है (पृष्ठ 63)।" महादेवी के जहरीले बातों ने नन्दू और प्रकाश को घर छोड़ने पर मजबूर कर दिया। प्रकाश के लिए नवाईदोम्बा जैसे उजड़ इलाके में अपना तथा अपने परिवार का गुज़ारा करना मुश्किल था। एक दिन नन्दू बिना किसी को बताए सूवा चला जाता है और उसका भाई, प्रकाश भी घर, जमीन और किसानों की स्थिति से परेशान होकर केनैडा चला जाता है। इस तरह श्यामसिंह का संयुक्त परिवार बिखर जाता है।

कंवल ने अपने उपन्यास में विस्थापन के कारण किस तरह संयुक्त परिवार टूट रहे हैं इसको चित्रित किया है। आत्मीयता की कमी, अर्थ के अभाव में और बेरोजगारी पारिवारिक संगठन एवं मूल्यों में दरारे पैदा करने लगता है। फलस्वरूप पारिवारिक जीवन का ढाँचा डगमगा उठता है।

उद्देश्य

कंवल जी ने 'धरती मेरी माता' में प्रवासी भारतीयों की जमीन से जुड़ी समस्या को वाणी प्रदान की है तथा पाठकों को जमीन की समस्या के प्रति जागृत किया है। वह संकेत देते हैं कि अगर फीजी में भूमि के मुद्दे का हल नहीं किया गया तो यहाँ राजनीतिक और सामाजिक अस्थिरता, तनाव और जातीय दरारे बढ़ती जाएगी। यह मूल निवासी और प्रवासी भारतीयों के बीच दरारे पैदा कर सकती है क्योंकि यहाँ फीजियन जमींदार हैं और हिन्दोस्तानी किरायेदार हैं।

लेखक ने इस समस्या के समाधान की ओर भी संकेत किया है- वह है नन्दू का आदिवासी फीजियन लड़की, वानी के साथ अंतर्जातीय विवाह। यह कंवल जी की प्रगतीशील विचारधारा का सूचक है। इसके साथ ही वे आदिवासी पात्र मेली और नन्दू की दोस्ती के माध्यम से अंतर्जातीय मेल-मिलाप को भी बढ़ावा देने का सुझाव देते हैं। उपन्यासकार इन विचारों को नन्दू के भाषण द्वारा प्रकट करता है- "हम जानते हैं कि फीजी काईवीती

भाइयों का देश है। अगर हम इस बात से इंकार करेंगे तो इतिहास हमें माफ नहीं करेगा। मगर हमारा देश भी यही है। हम कहाँ जाएं। अगर काईवीती लोग हमें अपने भाइयों की तरह स्वीकार नहीं करेंगे तो इतिहास उन्हें भी क्षमा नहीं करेगा।" हिन्दोस्तनी और आदिवासी फीजियन समुदाय के अंतर्जातीय मेल-मिलाप से इन दोनों के बीच की शंकाएं दूर हो सकती हैं और दोनों समुदाय मिलकर फीजी देश के विकास के लिए आगे बढ़ें।

जोगिन्द्र सिंह कंवल एक ऐसे उपन्यासकार है जिन्होंने फीजी की समकालीन भारतीय समाज की विभिन्न परिस्थितियों, प्रवृत्तियों व समस्याओं का विस्तृत, गहरा एवं यथार्थ अनुभव किया है। इन अनुभवों को उन्होंने अपने उपन्यास 'धरती मेरी माता' में प्रगतिवादी एवं यथार्थ दृष्टि से अंकित भी किया है। संक्षेप में कंवल जी ने 'धरती मेरी माता' में फीजी द्वीप के समाज की बहुस्तरीय समस्याओं की युगदृष्टा और भोक्ता बनकर सटीक अभिव्यक्ति की है।

संदर्भ सूची

1. जोगिन्द्र सिंह कंवल. 1999. धरती मेरी माता. सिंह पब्लिशर्ज, बा फीजी, पृष्ठ 46
2. Native Land Trust Board, 'NLTB Property in Fiji: Secured, Protected and Great Value!' Retrieved from http://www.nltb.com.fj/.
3. जोगिन्द्र सिंह कंवल. 1999. धरती मेरी माता. सिंह पब्लिशर्ज, बा फीजी, पृष्ठ 28
4. वही, पृ. 107
5. वही, पृ. 61
6. वही, पृ. 47
7. बाबूराम गुप्त.1989. उपन्यासकार नागार्जुन. लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद. पृ.15